

RNI : 66866/97

विश्व दीप दिव्य सन्देश

(मासिक शोध पत्रिका)

संरक्षक : सार्वभौम जगतगुरु, महामण्डलेश्वर परमहंस योगीराज श्री स्वामी महेश्वरानन्द जी

वर्ष-23

विक्रम संवत् - 2076

(सितम्बर-2019)

अंक-4



प्रकाशक

विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान

(जगद्गुरु रामानन्दाचार्य संस्कृत विश्वविद्यालय से सम्बद्ध)

कीर्ति नगर, श्याम नगर, सोढाला, जयपुर

विश्व दीप दिव्य संदेश

(मासिक पत्रिका)

वर्ष - 23

विक्रम संवत् - २०७६

अङ्क-4

सितम्बर, 2019

* प्रमुख संरक्षक *

परम महासिद्ध अवतार श्री अलखपुरी जी

परम योगेश्वर स्वामी श्री देवपुरी जी

* प्रेरणास्रोत *

भगवान् श्री दीपनारायण महाप्रभुजी

* संस्थापक *

परमहंस स्वामी श्री माधवानन्द जी

* संरक्षक *

सार्वभौम जगद्गुरु महामण्डलेश्वर परमहंस विश्वगुरु स्वामी श्री महेश्वरानन्द जी

* परामर्शदाता *

पण्डित अनन्त शर्मा

डॉ. नारायणशास्त्री काङ्कर

* प्रधान संपादक *

महामण्डलेश्वर स्वामी ज्ञानेश्वर पुरी

* संपादक *

सोहन लाल गर्ग

डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

* सह-संपादक *

डॉ. रामदेव साहू

डॉ. रघुवीर प्रसाद शर्मा

तिबोर कोकेनी

श्रीमती अन्या वुकादिन

* सहयोग *

डॉ. योगेश कुमार, नवीन जोशी

प्रकाशक

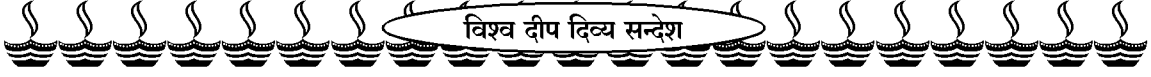
विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान

(जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय से सम्बद्ध)

कीर्ति नगर, श्याम नगर, सोडाला, जयपुर

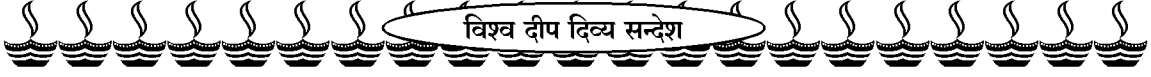
website : vgda.in, Youtube : www.youtube.com/c/vishwagurdeepashram

Email : jaipur@yogaindailylife.org



अनुक्रमणिका

Best Wishes		3
सम्पादकीय		5
1. आदिकवि-महर्षि-वाल्मीकि-द्वात्रिंशिका	डॉ. नारायणशास्त्रीकाङ्कर	7
2. ऋग्वेद-संहिता, प्रथमाष्टक के प्रथम अध्याय की छन्दोमीमाँसा	शिवनारायण शास्त्री	12
3. ATHLETE'S BASIC PHYSIOLOGICAL PARAMETERS ENHANCED BY PRACTICING BREATHE TECHNIQUES OF YOGA IN DAILY LIFE SYSTEM	Tibor KÖKÉNY	20
4. भारतराष्ट्रपरिचयः	डॉ. सुरेन्द्र शर्मा	25
5. वीराङ्गना महारानी कैकेयी	वैद्य गोपीनाथ पारीक 'गोपेश'	27
6. विश्वविज्ञान वेदशास्त्र	विनोद कुमार शर्मा	31
7. देव गुरु बृहस्पति देवी-देवताओं के भी गुरु हैं	जितेन्द्र हाडा	32



Best wishes

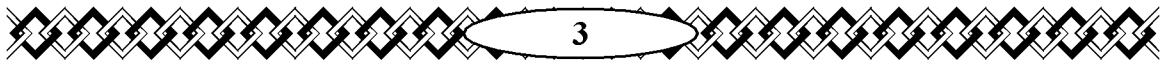
Dear readers,

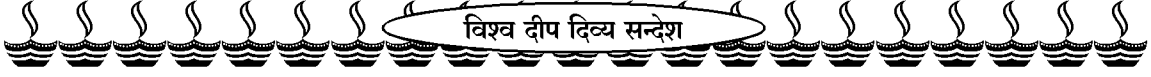
It is a great honour for me to be the part of the team that restarted the ‘Vishwa Deep Divya Sandesh’ magazine after almost twenty years. In this era of media overload to start, yet another magazine is very difficult. But still, we would like to share with all of you the things we do in our Research Centre. This magazine will have two forms, printed one and an online one. The online form is for scholars all over the world who could benefit from our work.

Our Gurudev Vishwaguru Paramhans Swami Maheshwaranandaji left India in the 1970s to teach yoga and the values of Vedic Culture in the west. In doing so, Yoga in Daily Life, the system was created and is now practised all over the world in more than 4500 centres. Although living and working in foreign countries for so long, he never forgot his roots. In 1990 he started building an Om Ashram, a building in the shape of Om, unique in the whole world in Jadan, Pali district of Rajasthan. In 2002 he also founded Yoga in Daily Life Foundation registered in New Delhi. Its branches are all over India, but main centres are in Jadan, Nipal and Bola Guda (Pali District), Kailash (Sikar), Badi Khatu and Kachriyavas (Nagaur) and Jaipur.

With the opening of Vishwaguru Deep Ashram Research Centre in 2016, a new page was turned in the life of the Foundation. Going to the roots of Indian Culture means to study Sanskrit and Vedas. Affiliation with Jagadguru Ramanandacharya Sanskrit Vishvavidyalaya transformed this idea into the practice. The world of Sanskrit literature is vast. Stretching from the time immemorial, the Vedas till today, the literature world is full of jewels. When I was asked what the Research Centre will do, I answered: “Everything!” How can I decide between Vyakarana, Jyotish, Darshana, literature and all other amazing topics? It is simple if it is in Sanskrit, it is for us. If nobody wants to do it, we shall. We also expanded to include all Indian languages, specially Marwari as the masters of our Parmapara wrote so many bhajans in Marwari.

I would kindly request all the readers who are interested in the promotion of Sanskrit





roots, Indian Culture, Vedas or any other topics to help us maintain this magazine with their articles.

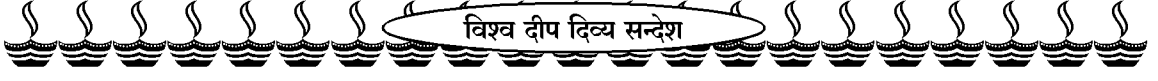
I want to thank all professors who have been helping us and will help us in the future.

My special thanks go to Dr. Narayan Shastri Kankar, Sh. Shiv Narayan Shastri, Sh. Tibor Kokeny, Dr. Surendra Sharma for their article and support.

Naturally, I would like to express my endless gratitude to my Gurudev, Vishwaguru Swami Maheshwaranandaji without whom nothing of this would be possible.

Yours sincerely,
Mahamandaleshwar Swami Gyaneshwar Puri





विश्व दीप दिव्य सन्देश

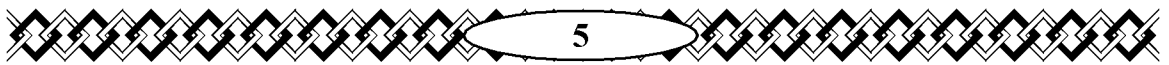
सम्पादकीय

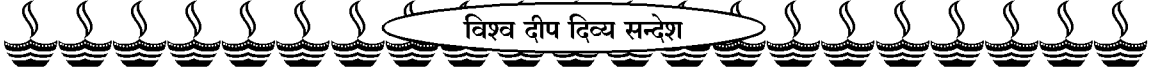
विश्व गुरुदीप आश्रम शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित मासिक शोध पत्रिका का चतुर्थ पुष्प आपके कर कमलों में देते हुए अत्यधिक हर्ष का अनुभव हो रहा है। इस मासिक पत्रिका के तीन अंक पूर्व में प्रकाशित हो चुके हैं। भारतीय धर्म संस्कृति के शोध लेखों का यह संग्रह विद्वानों द्वारा सराहा जा रहा है। नियमित विद्वानों द्वारा भेजे जा रहे शोध लेख हमारा मनोबल बढ़ा रहे हैं व पत्रिका के महत्त्व को भी आलोकित कर रहे हैं। पूर्व अंकों में सभी उच्चस्तरीय विद्वानों के लेख प्रकाशित हुए हैं व शोध संस्थान द्वारा किये गये कार्यक्रमों के चित्र सहित विवरण प्रकाशित किया गया है।

इस चतुर्थ अंक में 'वेद छन्द' पर शिवनारायण जी का लेख, वेद में छन्द शास्त्र का महत्त्व बता रहा है। साथ ही आदिकवि वाल्मीकी की प्रशंसा में स्वरचित पद्य नारायण शास्त्री कांकर द्वारा पत्रिका को मनोहरणीय बना रहा है। योग शास्त्र पर आङ्ग्ल भाषिक निबन्ध व डॉ. सुरेन्द्र शर्मा का 'राष्ट्र प्रेम' पत्रिका के लिए गौरव का विषय है। यहाँ छात्रों से भी अपनी लेखनी को पूर्ण मनोयोग से समाहित किया है। आप सब का उत्साह ही हमारे निरन्तर प्रकाशन को सार्थक बना रहा है।

आप सभी को शुभकामना व आगामी लेखों के लिए आग्रह के साथ।

—सम्पादक





* पाठक प्रतिक्रिया *

शोभन्ते शारदायाः कनककमलालास्यभास्यास्यदीप्ति-
र्यस्यामेषा सुरम्या मुखरकविमुखावासिनी वासवानाम्।
पूज्या वाणी शुभऽभ्रे कलमतिचकलं काकलीं कोकिलानां
धारासारा विसाराः प्रशमितदहनाशशारदावारिवाहाः॥

लीलापद्मानुकारैस्सुललितचरणैर्वारिणीवृन्दमरुन्यद्
वृन्दं वृन्दावनादयं ह्यशरणशरणं प्राप्यमाणं सरागम्।
ब्रह्मासारैकसारं प्रतिपलरसनापानलग्नैकचेताः
धन्यो मान्यो वदान्यो जगति विजयताद् भूरिभाग्यो मनुष्यः॥

डॉ. रामदेव साहु

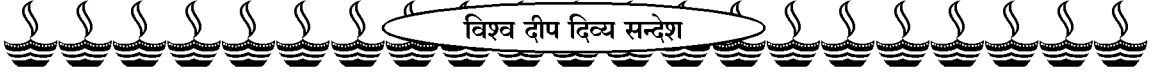
* वेद- विज्ञान *

(VEDA-SCIENCE)

- विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान, कीर्ति नगर, श्याम नगर, जयपुर में एक नवीन पाठ्यक्रम "वेद विज्ञान" का प्रारम्भ होने जा रहा है। जिसमें वेद और विज्ञान दोनों का अध्ययन प्रयोगात्मक रूप से कराया जायेगा, जिसे सिख कर हम एक नये कीर्तिमान को हासिल कर सकेंगे।
- वेद विज्ञान की कक्षाओं का प्रारम्भ नये सत्र से एक निश्चित पाठ्यक्रम से किया जायेगा। जिसकी अवधि छः मास की होगी।
- प्रथम सत्र में आवेदनकर्त्ताओं की 50 सीटे होगी जो दो भागों में आरक्षित होगी-25 सीटे संस्कृत विभाग तथा 25 सीटे अन्य (science, history, geography etc.) होगी।
- पात्रता- स्नातक, स्नातकोत्तर व **ph.d** आदि मान्य होगी, आवेदन के लिए शुल्क 3100/-
- जल्दी ही आवेदन की तिथि घोषित कर दी जायेगी।
- **VEDA-SCIENTISTS** (वेद- वैज्ञानिक) की डिग्री प्राप्त कर सकेंगे।

स्वामी ज्ञानेश्वरपुरी

उपाध्यक्ष



आदिकवि-महर्षि-वाल्मीकि-द्वित्रिंशिका

डॉ. नारायणशास्त्रीकाङ्कर

अथि आदिकवि-वाल्मीकि, नाम्ना विख्यात मुनि-पुङ्गव!
नमो नमस्ते सततं, यशो-गगने दीव्यदुपाय॥1॥

हे आदि कवि वाल्मीकि के नाम से विख्यात मुनिराज! यशरूपी आकाश में चमकते हुए नक्षत्र! आपको सतत नमन है, नमन है।

त्वमेव सर्वप्रथममिट, प्रणीतवान् रामायणं महाकाव्यम्।
इदयस्त्यग्रे विरचित-समसत-वामकृतीन्नुप जीव्यमेव॥2॥

आपने ही सबसे पहिले यहाँ रामायण महाकाव्य प्रणीत किया है। यह आगे रची गयी समस्त राम-कृतियों का उपजीव्य ही है।

त्वमसि करुणार्द्र-हृदयो, यः क्रौञ्च-वियोगाद् विलपन्ती क्रौञ्चीम्।
वीक्ष्य निसादाय शाप, -मदात् प्रतिष्ठां नातुं शाश्वतीः समाः॥3॥

आप करुणा से आर्द्र बने हृदय वाले हो, जिन्होंने क्रौञ्च के वियोग से विलाप करती हुई क्रौञ्ची को देखकर क्रौञ्च का वध करने वाले निषाद को सदा-सदा के लिए प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं करने का शाप दे दिया था।

रामायण-निर्माणे, क्रौञ्च-वियोगोऽयमेव मुख्यो हेतुः।
करुणा-रस-प्लुतमिदं, कस्य न पाषाण-हृदयं विद्रावयति?॥4॥

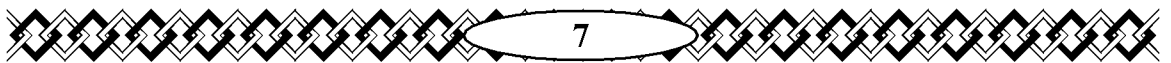
रामायण का निर्माण करने में यही क्रौञ्च का वियोग मुख्य कारण बना। करुणा-रस से आप्लावित यह रामायण किसके पाषाण-हृदय को नहीं पिघला देता है?

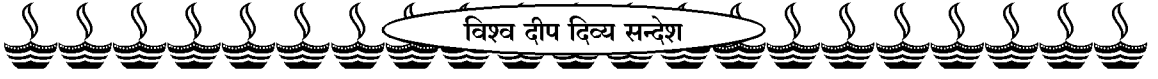
एतद् रामायणं तु, सत्यमेवादर्श-गार्हस्थ्य-दर्पणः।
समस्तैरपि गृहस्थैः, स्वं रचं चरित्रं शिक्षितव्यभे तेन॥5॥

यह रामायण तो सचमुच ही आदर्श गार्हस्थ्य का एक दर्पण है। सभी गृहस्थियों को इससे अपने अपने आचरणीय चरित्र को सीखना चाहिये।

रामवद् वर्त्तितव्यं, न रावण वदित्युपदिशामि रामायणम्।
रामराज्यवत् स्वराज्य, -मपि सुराज्यं कर्तुं शिक्षयति तदिदम्॥6॥

राम की तरह वर्त्ताव करना चाहिये, रावण की तरह वर्त्ताव नहीं करना चाहिये। रामायण यह उपदेश देती है। स्वराज्य को भी रामराज्य की भाँति सुराज्य बनाने के लिये वह यह रामायण शिक्षा देती है।





परन्तु कुत्र हा! तदिद,-मनुसरन्ति सम्प्रति संसारे लोकाः?

सर्वत्र रावण-भूत,-नराः स्त्रीषु दुराचरन्ति घ्नन्ति च॥7॥

परन्तु हा! दुःख है, संसार में लोग अब कहाँ इस बात का अनुसरण करते हैं। वे तो सर्वत्र ही रावण बने हुए स्त्रियों पर दुराचार करते हैं और उनके मार देते हैं।

अद्य तु रावण-भीतः, श्रीरामोऽपि नावतरति भूतलेऽस्मिन्।

कथं स्त्रीणां सतीत्वं, सुरक्ष्येतेति चिन्ता मां हि बाधते॥8॥

आज तो इन रावणों से डरे हुए श्रीरामजी भी इस भूतल पर अवतार नहीं लेते हैं। स्त्रियों का सतीत्व कैसे सुरक्षित हो? यह चिन्त्य मुझको बाधित करती है।

माता-पित्रोः श्रद्धा, भ्रातृ-भ्रात्रोः स्नेहोऽत्र विलुप्त एव।

पति-पत्न्योः सौहार्द, नहि दृश्यते क्वाप्युदाहरणीयं हा॥9॥

माता-पिता में श्रद्धा, भाई-भाई में स्नेह यहाँ विलुप्त ही हो गया है। हा! दुःख है, पति-पत्नी में कहीं भी उदाहरणीय सौहार्द दिखायी नहीं देता है।

नानाविद्यातङ्कैस्तु, नहि कोऽपि सुखेन निद्रातुं शक्नोति।

अकाल-मृत्युः सदैव, सर्वेषामपि मूर्धनि हा! नरीनर्त्ति॥10॥

नाना प्रकार के आतङ्कों से तो कोई भी सुख से निद्रा नहीं ले सकता। हा! दुःख है, सभी के सिर पर सदा है। अकाल-मृत्यु नृत्य किया करती है।

नैला दैवी विपदा, किन्तु मनुष्योत्पादितामियां मन्ये।

विकृत-मनो-मनुष्याहि, नाना दुराचारान् प्रकुर्वतेऽनिशम्॥

यह दैवी विपदा नहीं है। किन्तु मैं इसे मनुष्यों से उत्पादित मानता हूँ। विकृत मन वाले मनुष्य ही निरन्तर नाना दुराचार करते हैं।

शासकाङ्कुशोऽस्ति नैषु, परमेश्वर-भीतास्तु नैते सन्ति।

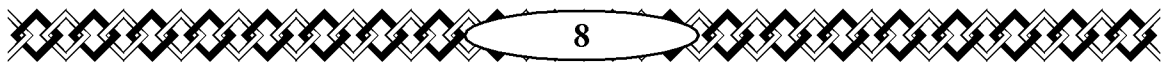
समाजोऽपि निष्क्रियोऽत्र, दर्शं दर्शमिदं दोदूयेऽहम्॥12॥

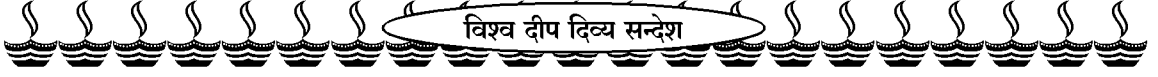
इन पर शासन-कर्त्ताओं का अङ्कुश नहीं है। ये परमेश्वर से डरने वाले तो हैं ही नहीं। समाज भी इस विषय में निष्क्रिय बना हुआ है। मैं तो यह देख-देख कर बहुत ही दुःखी हो रहा हूँ।

मनःशोधनोपायो, वर्त्तते सर्वेभ्यः संस्कृत-शिक्षणम्।

शिक्षित-संस्कृताः पुनर्, न दुराचरन्ति कुत्रापि कदापि किमपि॥13॥

मन को शुद्ध करने का उपाय है सभी को संस्कृत सिखाना। संस्कृत सीखे हुए लोग फिर कहीं भी कभी कोई भी दुराचार नहीं करते हैं।





शिक्षित-संस्कृत-जनेषु, भवति स्व-कर्तव्य बोधः स्वतो हि।
भ्रष्टाचारेऽवितेन, प्रवर्तन्ते सदाचारिणः॥14॥

संस्कृत सीखे हुए लोगों में स्वतः ही अपने कर्तव्यों का बोध हो जाता है। सदाचारी बने हुए वे भ्रष्टाचार करने में भी प्रवृत्त नहीं होते हैं।

शिक्षित-संस्कृत-नृणां, स्वदेशे स्वस्वामिनि भवति भक्तिः।
ते तत् कुर्वन्ति नैव, यत् स्यात् तत् कीर्त्ति-कलङ्क-कृत॥15॥

संस्कृत सीखे हुए मनुष्यों की अपने देश में और अपने स्वामी में भक्ति होती है। वे उस काम को नहीं करते हैं, जो उनकी कीर्त्ति को कलङ्कित करने वाला हो।

शिक्षित-संस्कृता जना, न भ्रष्टाचारिणो न चातङ्क-कृतः।
दृष्टाः श्रुता दण्डिता, वा कुत्रापि केनापि कदापि ते नहि॥16॥

संस्कृत सीखे हुए लोग न भ्रष्टाचारी होते हैं और न आतङ्ककारी। वे इन अपराधों के कारण किसी के भी द्वारा कहीं भी कभी भी दण्डित किये हुए नहीं देखे सुने गये हैं।

शिक्षित-संस्कृत-जना, न बलात्कारिणो न च देश-द्रोहिणः।
न चापि तस्करा न कार्य, चौरा वञ्चका वा भवन्ति कुत्रापि॥17॥

संस्कृत सीखे हुए व्यक्ति न बलात्कारी होते हैं और न देश-द्रोही। कहीं भी वे न तस्कर होते हैं, न कामचोर या वञ्चक।

सर्वाः प्रवृत्तयः सन्ति, स्वार्थ-मूलाः सदैव हि।
तासामुच्चाटने नूनं, क्षयं संस्कृत-शिक्षणम्॥19॥

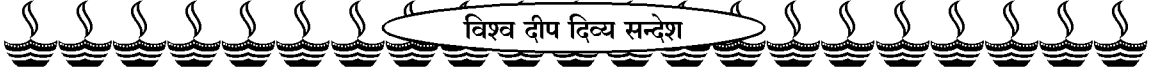
मनुष्य की सभी प्रवृत्तियाँ सदा ही स्वार्थ के मूल वाली होती हैं। उन स्वार्थ-मूलक प्रवृत्तियों का उच्चाटन करने में संस्कृत की शिक्षा देना ही लाभकारी है।

सर्वे स्वार्थ-रता लोकाः, पर-पीडां न जानते।
संस्कृतज्ञास्तथा नैव, कश्चित् ते पीडयन्ति न॥19॥

स्वार्थ साधने में लगे रहने वाले सभी लोग दूसरों की पीड़ा को नहीं जानते। परन्तु संस्कृत जानने वाले लोग वैसे नहीं होते हैं। वे तो किसी को पीडित भी नहीं करते।

संस्कृत-वित् सद्वृत्तो, भवति स न कस्यैचन हानि-दाता।
आत्म-घाती स्वयं न सः, परघाती तु कथं भवेत्?॥20॥

संस्कृत जानने वाला सदाचारी होता है। वह किसी को हानि देने वाला नहीं होता। वह स्वयम् आत्मघाती नहीं है, पर-घाती तो वह कैसे होगा?



संस्कृत-शिक्षिता यत्र, स्त्रियः स्वकर्म-संरताः।

तत्र तत्-संन्ततिर्योग्या, सदाचार-परायणा॥21॥

जहाँ संस्कृत की शिक्षा पायी हुई स्त्रियाँ अपने कर्तव्य-कर्मों में सम्यक् लगी रहती हैं, वहाँ उनकी सन्तान भी योग्य और सदाचार-परायण होती हैं।

सर्वेभ्यो यदि दीयेत, संम्यक् संस्कृत-शिक्षणम्।

शारीरं मानसं स्वास्थ्यं, विकृतं स्यात् कदापि न॥22॥

सभी को यदि अच्छी तरह संस्कृत की शिक्षा दे दी जाये तो उनका शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य कभी विकृत नहीं हो।

संस्कृत-शिक्षयाऽवश्यं, मनः पूतं प्रजायते।

मनसि पूततां प्राप्ते, भ्रष्टाचारो न जायते॥23॥

संस्कृत की शिक्षा देने-दिलाने से मन अवश्य ही, पवित्र हो जाता है। फिर मन के पवित्र हो जाने पर भ्रष्टाचार नहीं होता है।

संस्कृत-शिक्षया तु, मानसिक-शुद्धिर्भवति स्वयमेव ननु।

मनसा शुद्धा व्यक्तिर्, न पुनर्दुराचरति किमपि कदापि कुत्र॥24॥

संस्कृत की शिक्षा से तो मन की शुद्धि स्वयं ही निश्चित रूप से हो जाती है। फिर मन से शुद्ध हुआ व्यक्ति कहीं भी कभी कोई भी दुराचार नहीं करता है।

संस्कृत-विद्येवैका, सकल-विश्वोपकारिणी सर्वथा।

कदा शासन-नेतार, एतत् सत्यमवगमिष्यन्ति?॥25॥

एकमात्र संस्कृत-विद्या ही समस्त विश्व का सब प्रकार से उपकार करने वाली है। इस सत्य को शासनकर्त्ता नेता कब समझेंगे?

सन्तीमे संस्कृतस्य, शिक्षाया बहवो हिताभाः।

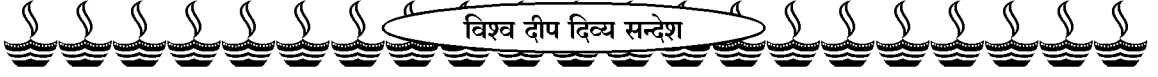
तस्मात् सुख-शक्ति-कृते, प्रार्थये महर्षि-मणे! त्वामधुना॥26॥

संस्कृत की शिक्षा के ये बहुत सारे लाभ हैं। अतः हे महर्षिमणि वाल्मीकि जी महाराज! मैं इस समय सुख-शान्ति के लिए आपसे प्रार्थना करता हूँ कि-

संस्कृतमनिवार्यतया, सर्वानपि शिक्षयितुं महामुने! त्वम्।

प्रेरयं शासक-वृन्दं, येन हि मनो न प्रदूष्येत लोकानाम्॥27॥

हे महामुनि जी! आप सभी को अनिवार्य रूप से संस्कृत सिखाने के लिये शासक-वृन्द को प्रेरित कीजिये, जिससे लोगों का मन प्रदूषित न हो।



स्व-योग-बलेन किं नहि, कर्तुं शक्नोति हे महर्षि-मणे!

किमस्ति तद्? यत् त्वमत्र, वाञ्छे: पुनश्च तन्नरि संसिध्येत्॥28॥

हे महर्षि-मणि जी! आप अपने योगबल से क्या नहीं कर सकते हो? वह क्या है? जिसे आप यहाँ चाहें और फिर वह सिद्ध न हो!

कुरु कृपां त्वमविलम्बं, रावण-राज्य-स्थानेऽधुना।

तिस्यं सकल-सुख-दीयि, राम-राज्यं दर्शय सर्वत्र रे॥29॥

अजी! आप कृपा कीजिये और अब अविलम्ब ही रावण-राज्य के स्थान पर नित्य समस्त-सुख-दायक रामराज्य सर्वत्र दिखा दीजिये।

इदमेव विनिवेदये, पुनः पुनः प्रणिपत्य ते पदान्जयोः।

कुरुष्व मां न निराशं, महाकारुषिकोऽसि त्वं तु मुनिराज॥30॥

यही मैं आपके चरण-कमलों में पुनः पुनः प्रणाम करके विशेष निवेदन करता हूँ। आप मुझको निराश मत करना। हे मुनिराज! आप तो महान कारुणिक हो।

नान्यद् याये स्व-कृते, साधयसे यदीदमेव प्रार्थितं मे।

तर्हनेनाप्यहं भोः! परमानन्दमेवानुबोभविष्यामि॥31॥

अपने लिये मैं आपसे अन्य कोई याचना नहीं करता। यदि आप मेरी इस प्रार्थित बात को सिद्ध कर देते हो तो अजी! मैं इससे भी परमानन्द ही बहुत बहुत अनुभूत करूँगा।

किमधिकं विनिवेदयै?, सर्वं हार्दं त्वं मे वेत्सि।

अतोविरमाम्यत्रैव, प्रणमन् नारायणकाङ्करः॥

मैं अधिक विशेष निवेदन क्या करूँ? आप तो मेरे हृदय की सब बात को जानते हो। अतः मैं नारायणकाङ्कर आपको प्रणाम करता हुआ अब यहीं विराम ग्रहण करता हूँ।

राष्ट्रपति सम्मानित,
पीठाचार्य, संस्कृत प्रचार-प्रसार शोधपीठ,
विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान, जयपुर



ऋग्वेद-संहिता, प्रथमाष्टक के प्रथम अध्याय की छन्दोमीमांसा

शिवनारायण शास्त्री

इस निबन्ध में ऋग्वेदसंहिता के प्रथम अष्टक के अष्टाक्षर गायत्री में निबद्ध १७ और अनुष्टुप छन्द में निबद्ध २ सूक्तों के कुल १९४ मन्त्रों की समीक्षा अक्षरपरिणाह की दृष्टि से की गई है। इस के अतिरिक्त वैश्वामित्र मधुच्छन्दस् के एकमात्र और सूक्त (९.१) के दस मन्त्रों की मीमांसा भी इससे उनका अध्ययन पूरा हो जाने की दृष्टि से की गई है।

वाणी का लय में बहना छन्द कहाता है।¹ वैदिक छन्द मु यतः सात हैं : १ गायत्री, २ उष्णिक्, ३ अनुष्टुप्, ४ बृहती, ५ पङ्क्ति, ६ त्रिष्टुप् और ७ जगती।² इन सात छन्दोजातियों में रचित मन्त्र या श्लोक³ की समुच्चित अक्षरसङ् या अष्टाक्षर पाद से ले कर द्वादशाक्षर पादपर्यन्त २४ से प्रारंभ करके चार-चार अक्षरों की वृद्धि से⁴ क्रमशः १ गायत्री (२४ अक्षर), २ उष्णिक् (२८ अक्षर), ३ अनुष्टुप् (३२ अक्षर), ४ बृहती (३६ अक्षर), ५ पङ्क्ति (४० अक्षर), ६ त्रिष्टुप् (४४ अक्षर), और ७ जगती में निबद्ध मन्त्र या श्लोक की अक्षरसङ् या ४८ होती है।

यह अक्षरपरिमाण ऋग्वेद का सामान्य मानक परिमाण है। इन्हें ऋषिच्छन्द या आर्ष छन्द कहा जाता है। इनमें एकेक अक्षर अधिक होने से उस छन्दोजाति को 'दैवी' कहा जाता है और न्यून होने से 'आसुरी' कहा जाता है। ऋग्वेदीय मन्त्र और लौकिक श्लोक प्रायः ऋषिच्छन्दों में रचित हैं।⁵

१ वाग् वै सरिरं छन्दः। शतपथब्राह्मण ८.५.२.४

२ गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च, बृहती च प्रजापतेः। पङ्क्तिस्त्रिष्टुब् जगती च, सप्तच्छन्दांसि तानि ह। ऋ० प्रा० १६.१

३ ऋषिदृष्ट रचना मन्त्र कहालाती है और छन्दोबद्ध लौकिक रचना श्लोक।

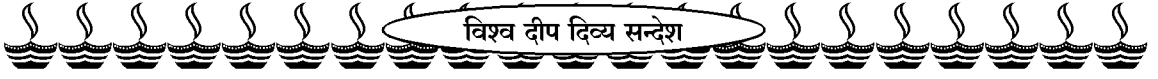
४ चतुरुत्तर वै वाचो रोहाः। जैमिनीय ब्राह्मण २.३.६७, अष्टाक्षरप्रभृतीनि चतुर्भूयः परं परम्। ऋ० प्रा० १६.२

५ दैवान्यपि च सप्तैव, सप्त चैवासुराण्यपि। ऋ० प्रा० १६.२

एकोत्तराणि देवानां, तान्येवैकाक्षरादधि। एकावमान्यसुराणां, ततः पञ्चदशाक्षरात्।। ३

तानि त्रीणि समाग य, सनामानि सनाम तत्। एकं ऽवत्युष्णिच्छन्दस्, तथा गच्छति स पदम्।। ४

एवं त्रिप्रकृतीन्याहुर, युक्तानि चतुरुत्तरम्। ऋषिच्छन्दांसि, तैः प्रायो, मन्त्रः श्लोकश्च वर्तते।। ५



१ गायत्री और २ उष्णिक प्रायः त्रिपदा होती हैं। १ गायत्री $८ \times ३ = २४$ और २ उष्णिक $८ \times २ + १२ = २८$ अक्षर। पर वे चतुष्पदा भी मिलती हैं। १ गायत्री $६ \times ४ = २४$ अक्षर और $७ \times ४ = २८$ अक्षर।^१

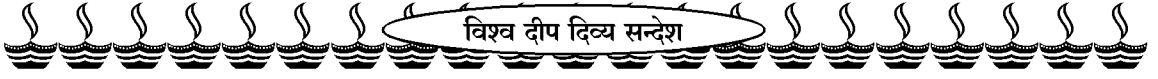
शौनक ने गायत्री के विषय में दो बातें और आवश्यक बताई हैं : अष्टाक्षर पाद का षष्ठ अक्षर गुरु और सप्तम अक्षर लघु होना चाहिये। कात्यायन ने ६ त्रिष्टुप् (एकादशाक्षर पाद) के विषय में लघूपोत्तमता को आवश्यक नहीं माना लगता है। उन्होंने अक्षरसं या पर ही बल दिया है।^२

ऋग्वेद संहिता के १.१ सूक्त की नौ ऋचाओं में से १, ३, ४, ५, ७ ऋचाएँ $८ \times ३ = २४$ अक्षरों से युक्त हैं और इनका षष्ठ अक्षर गुरु, सप्तम अक्षर लघु तो है ही, पाँचवाँ अक्षर लघु है। अर्थात् ये जविपुला गायत्री में हैं।

दूसरी ऋचा का द्वितीय पाद 'रीळियो नूतनैरुत', ६.२ पाद 'यदङ्ग दाशुषे तुव', ८.३ पाद 'वर्धमानं सुवे दमे।।' और ९.३ पाद 'सचस्वा नः सुवस्तये।।' जात्य यण् के व्यवाय से, अष्टाक्षर भी होंगे, गुरु-लघु भी यथास्थान स्थित होंगे और २.२ पाद लघूपोत्तम भी होगा।

८.१ पाद एकाक्षरन्यूनता से निचृद् गायत्री में है और सप्तम अक्षर गुरु भी है। इस स्थिति में पादपूर्ति के लिये शौनक, कात्यायन और पिङ्गल नाग, सब ने यण् वर्णों के संयोग का सदृश स्वरवर्णों के व्यवधान (व्यवाय) से या व्यूह से (विच्छेद) का विधान किया है।^३ इस व्यवस्था में वर्णधर्म स्वरों

- १ गायत्री, सा चतुर्विंशत्यक्षरा।
अष्टाक्षरासु त्रयः पादाश्च, चत्वारो वा षडक्षराः। ऋ० प्रा० १६.९
अष्टाविंशत्यक्षरोष्णिक, सा पादैर्वर्तते त्रिभिः।
पूर्वावष्टाक्षरौ पादौ, तृतीयो द्वादशाक्षरः।। ऋ० प्रा० १६.२०
सप्ताक्षरैश्चतुर्भिर्द्वे, 'नदं', 'मंसीमहि'ति च।। २२
द्वितीयमुष्णिक त्रिपदा। अन्त्यो द्वादशकः। चतुःसप्तकोष्णिकेव।। ऋग्वेदानुक्रमणी ५.१,८
- २ एकादशद्वादशिनोर्लघावष्टममक्षरम्। ऋ० प्रा० ८.२१
दशमं चैतयोरेवं, षष्ठं चाष्टाक्षरेऽक्षरम्।। २२
वर्षिष्ठाणिष्ठयोरेषां, लघूपोत्तममक्षरम्। गुर्वेतेतयोर्ऋक्षु, तद् वृत्तं छन्दसां प्राहुः।। ऋ० प्रा० १७.२२
- ३ व्यूहेदेकाक्षरीभावान्, पादेषूनेषु स पदे।
क्षैप्रवर्णाश्च संयोगान्, व्यवेयात् सदृशैः स्वरैः।। ऋ० प्रा० १७.१४
व्यूहैः स पत् समीक्ष्योने, क्षैप्रवर्णैकभाविनाम्।। ऋ० प्रा० ८.२२

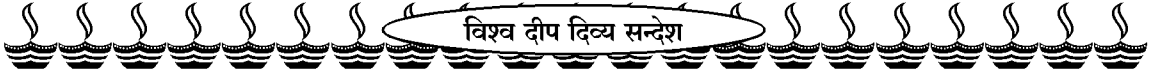


(स बद्ध स्वर के अतिरिक्त आगे-पीछे के उदात्तादि) को यथायोग्य रूप में लाकर संहितापाठ के अनुकूल बनाना भी आवश्यक है। इस व्यवस्था से ८.१ पाद का शुद्ध, पूर्ण पाठ यों होगा: 'राजन्तमधुवराणां'। ९.२ पाद १-२ पादों की पूर्वरूप एकादेश सन्धि के कारण एकाक्षर से न्यून, निचृद् है। इसकी पूर्ति एकादेश का व्यूह करके 'सूनवे, अग्रै, सूपायनो भव।' पाठ से होगी ॥ १)

दूसरे सूक्त के ४-६ मन्त्र तो पूर्वोक्त मानकों पर खरे हैं। पर १.२ पाद 'वायवायाहि दर्शत, इमे सोमा अरङ्कृताः।' पादसन्ध्य गुणसन्धि को तोड़ कर ही निर्दोष होगा। २.२ पाद 'जरन्ते, तुवामच्छा जरितारः।' जात्य यणसंयाग के व्यवाय से और ६.३ पाद 'मक्षुवित्था धिया नरा ॥' यणसन्धि के व्यवाय से अष्टाक्षर और जविपुल तो होंगे ही, क्षैप्रस्वरित के भङ्ग के कारण क प का उच्चारण भी नहीं होगा। २.१, ७.३, ८.३ और ९.१ और ३ पादों की लघुगुरुव्यवस्था भी जविपुला की न होकर २.१ में रविपुला (ऽ । ऽ), ७.३ में मविपुला (ऽऽऽ), ८.३ में यविपुला (। ऽऽ), ९.१ और ३ पादों में भविपुला (ऽ ॥) गायत्री की है ॥ २ ॥

तीसरे सूक्त के १२ मन्त्रों में से सात (१, ३, ५-७, १० और १२) मन्त्र तो सुलक्षण हैं। २.३ पाद 'धिष्ण्या वनतं गिरः ॥', ४.२ पाद 'सुता इमे तुवायवः।' जात्य यणव्यवाय से पूर्ण और जविपुल होंगे। ४.१ पाद रविपुल (ऽ । ऽ), ३ पाद सविपुल (। । ऽ), ९.१-२ पाद तविपुल (ऽऽ ।), ११.१ पाद रविपुल (ऽ । ऽ) और अष्टाक्षर हैं। ११.२ पाद निचृद् गायत्री में है ॥ ३ ॥

चौथा सूक्त मधुच्छन्दस् का गायत्रीनिबद्ध दस ऋचाओं वाला चौथा सूक्त है। ३.१ पाद यविपुल निचृद् गायत्र है। इस में सप्तम अक्षर गुरु है। २ पाद भी निचृद् गायत्र है। पर व्यूह-व्यवाय की प्रक्रिया से 'विदियाम सुमतीनाम्।' पाठ अष्टाक्षर तो हो जाता है, पर सविपुल (। । ऽ) हो जाता है। ५.१-२ पाद (। ऽ । ऽ । ऽ । ऽ, । ऽ । ऽ । ऽ । ऽ) अक्षर-विन्यास में भी जविपुल और अष्टाक्षर होने से 'गायत्री' के लक्षण पर खरे उतरते हैं। ८.२ पाद भविपुल (ऽ ॥) गायत्र है। १०.१ पाद 'यो रायो अवनिर्महान्' पाठ से, पूर्वरूप सन्धि के व्यूह से, सुलक्षण गायत्र स पन्न होता है ॥ ४ ॥

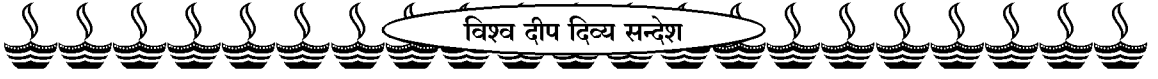


पाँचवें सूक्त की दस ऋचाओं की रचना विश्वामित्र कौशिक के पुत्र मधुच्छन्दस् ने गायत्री में की है। १.१-२ पाद 'आ तुवेता नि षीदत, इन्द्रमभि प्र गांयत।', व्यवेत और व्यूढ पाठ से सुलक्षण अष्टाक्षर बनेगा। २.१ पाद निचृद् गायत्र है। २ पाद षडक्षर है। पर 'ईशानं वारियाणाम्।' पाठ से जात्य यण् के व्यवाय से निचृद बनता है। ३.२ पाद की पूर्ति 'स राये स पुरंन्धियाम्' पाठ से, ५.३ पाद 'सोमांसो दधियाशिरः।', यणसन्धि के व्यवाय से, ६.१ पाद 'तुवं सुतस्य पीतये,' पाठ से सुलक्षण गायत्र बनेगा। ७.२ पाद 'आ त्वां विशन्तुवाशवः,' यणसन्धि के व्यवाय से पूर्ण और जविपुला गायत्री में स पत्र होगा। अष्टम मन्त्र के तीनों पाद सप्ताक्षर, निचृद् हैं और इससे यह मन्त्र यथापाठ में पादनिचृद् गायत्री में है। पर, कात्यायन ने इस का उल्लेख नहीं किया है। अपितु 'आदौ गायत्रं प्राग्घैरण्यस्तूपीयात्' (ऋ० १.३१)-ऋ० अ० १२.१४ परिभाषा से यह गायत्री में है। यह स्थिति तीनों पादों में 'तुवां' व्यवाय से 'तुवां स्तोमां अवीवृधन्, तुवामुक्था शतक्रतो। तुवां वर्धन्तु नो गिरः।।' पाठ से ही स भव है। ९.१ पाद भी 'यस्मिन् विश्वानि पौंसिया।।' जात्य यण् के व्यवाय से अष्टाक्षर और लघूपोत्तम होगा।

इन व्यवायों के अतिरिक्त इस सूक्त के शेष सभी मन्त्र सर्वाङ्गस पत्र अष्टाक्षर हैं।। ५।।

छठे सूक्त की दस ऋचाओं में से १.१ पाद अष्टाक्षर किन्तु नविपुल है। २.१ षडक्षर पाद 'युञ्जन्तियस्य कामिया', सन्ध्य और जात्य यण् के व्यवाय से तथा ८.२ पाद 'गणैरिन्द्रस्य कामियैः।।' जात्य यण् के व्यवाय से पूर्ण और सुलक्षण जविपुला गायत्री में स पत्र होंगे। १.३ पाद भविपुल अष्टाक्षर है। सूक्त के शेष २६ पाद जविपुला गायत्री में पूर्णक्षर हैं।। ६।।

सातवें सूक्त की दस ऋचाओं में से २.१ पाद 'इन्द्र इद्धरियोः सचा', यणव्यवाय से न केवल पूर्ण और जविपुल होता है, अपितु ५।५।, १५ १५ व्यवस्थित लय में स पत्र होता है। ३.३ पाद भी १५ १५ १५ १५ विशेष लय से संपन्न है। ४.१ पाद 'इन्द्र, वाजेषु नो अव', व्यवाय से जविपुल और अष्टाक्षर है। ८.२ पाद 'कृष्टीरियर्तियोजसा।' यणव्यवाय से श्रेष्ठ गायत्र बनता है। ९



मन्त्र के तीनों पादों में एकेक अक्षर कम हैं। अतः यह मन्त्र पादनिचृद् गायत्री में है। १ पाद का ५वाँ अक्षर लघु है और छठा गुरु। २ पाद में अन्तिम त्रिक भगण (ऽ।।) है। १०.२ पाद 'हवामहे जनेभ्यः।' जात्य यण् के व्यवाय से सुलक्षण, जविपुल पूर्ण और ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ अक्षरव्यवस्था से सुन्दर लय से स पत्र हो जाता है। शेष सब पाद सुलक्षण जविपुला गायत्री में हैं ॥ ७ ॥

आठवें सूक्त में दस ऋचाएँ हैं। १.१ पाद की पूर्ति और सुलक्षणता 'आ इन्द्र, सानसिं रयिं', गुणसन्धि के व्यूह से होगी। २.३ षडक्षर पाद 'तुवोतांसो नियर्वता', जात्य और सन्ध्य यण् के व्यवायों से सुलक्षण गायत्र बनेगा। ६.२ पाद नविपुल अष्टाक्षर है। ८.१ पाद 'एवा हियस्य सूनृतां,' क्षैप्र सन्ध्य यण् के व्यवाय से, १०.१ पाद 'एवा हियस्य कामियां,' एक क्षैप्र सन्ध्य और एक जात्य यण् के संयोग के व्यवाय से और दूसरा पाद 'स्तोमं उक्थं च शंसिया।' एक जात्य यण् के व्यवाय से सुलक्षण होंगे।

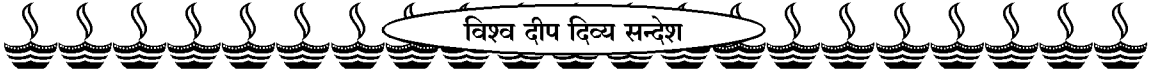
९.१.१ पाद 'इन्द्रेहि मत्सियन्धंसो', ३.३ पाद 'सचैषु सर्वनेषुवा', ५.२ पाद 'राधं इन्द्र वरेणियम्।', ६.२ पाद 'अस्मान्तसु तत्र चोदय, इन्द्रं राये रभस्वतः।' पाद गुणव्यूह और ९.३ पाद 'विश्वायुर्धेहियक्षितम् ॥' व्यवेत पाठ से सुलक्षण गायत्र बनेंगे। अर्थात् ये सब पाद संहितापाठ में अनार्ष सन्धियों से विकृत हुए हैं और इन के व्यवाय अथवा व्यूह से संहिता निर्दोष और आर्ष लय में आएगी।

९.९.१ पाद अष्टाक्षर तो है। पर नविपुलता के कारण लय एकदम बदल गई है। मेधातिथि को लय की दृष्टि से लघु-गुरु-लघु-गुरु अक्षरविन्यास बहुत पसन्द है। यह इन सूक्तों के गणक्रम से विदित होता है।

१०.१ पाद 'सुतेसुंते नियोक्से', सन्ध्ययणव्यवाय से पूर्ण और जविपुल होता है।

नवम सूक्त के अन्य सभी पाद जविपुल, पूर्णाक्षर और लघु-गुरु-लघु की नृत्यत्पदा जविपुल शैली में सुन्दर लय से प्रस्तुत किये गए हैं ॥ ९ ॥

प्रथम मण्डल के आरंभ में इन नौ सूक्तों के अतिरिक्त कौशिक विश्वामित्र के ज्येष्ठ पुत्र मधुच्छन्दस् का गायत्री छन्द में और इसी नृत्यत्पदा

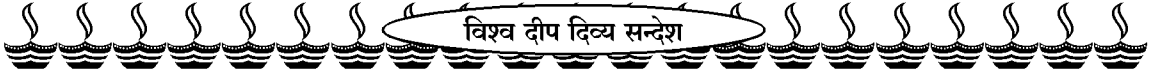


शैली में निबद्ध एक सूक्त और है : नवम मण्डल के दस ऋचाओं वाले प्रथम सूक्त की रचना भी मधुच्छन्दस् ने ही की है। इस का छान्दस विवरण इस प्रकार है :

नवम मण्डल के प्रथम सूक्त का ३.३ पाद यथापाठ में निचृद् गायत्र और यविपुल है। इसका पञ्चम अक्षर लघु, छठा गुरु और सातवाँ गुरु है। ४.१ पाद 'अभियर्ष महानां', सन्ध्य यण् का व्यवाय करके भी यविपुल निचृद् गायत्र रहता है। पञ्चम अक्षर लघु, छठा गुरु और सातवाँ भी गुरु है। ५.३ पाद 'तुवामच्छा चरामसि', ३ पाद 'इन्द्रो, तुवे न आशसः ॥', ७.३ पाद 'स्वसारः पारिये दिवि ॥', ८.१ पाद 'तमीं हिनुवन्त्यगुवो', अथवा 'तमीं हिन्वन्तियगुवो', ९.१ पाद 'अभी३ममधिन्या उत', १०.१ पाद 'अस्येन्दिन्द्रो मर्देषुवा', व्यवेत पाठ से जविपुलअष्टाक्षरस पत्र होते हैं। शेष सभी २२ पाद इसी प्रसन्न और नृत्यत्पदा लघु-गुरु क्रम की शैली में स्वाभाविकता को लिये हुए जगणविपुला ८×३=२४ अक्षर वाली गायत्री जाति में निबद्ध हैं ॥ ९.१.२ ॥

प्रथम मण्डल में मधुच्छन्दस का १२ ऋचाओं वाला एक, दसवाँ सूक्त अनुष्टुप् (८×४=३२ अक्षरों) में भी है। इस दसवें सूक्त का १.२ पाद प्रथम पाद से पूर्वरूप सन्धि के व्यूह से और यणसन्धि के व्यवाय से 'गायत्रिणो, अर्चन्तियर्कमर्किणः।' पाठ से और २.२ पाद 'भूरियस्पष्ट कर्तुवम्', क्षैप्र और जात्य यणसंयोगों के व्यूह और व्यवाय से अष्टाक्षर बनेगा। ३.२ पाद 'कक्षियप्रा' पाठ से निर्दोष होगा। ४.२ पाद प्रथम पाद से दीर्घ सन्धि के व्यूह और यणसन्धि के व्यवाय से 'स्वर, अभि गृणीहिया रुव।' एवं ४ पाद 'सचा, इन्द्र', पादसन्ध्य पूर्वरूप के व्यवाय से निर्दोष होंगे। ५ मन्त्र को १ पाद 'शंसियं' तथा ४ पाद 'सखियेषु' पाठ से और ६.२ पाद 'सुवीरिये' पाठ से। ८.३ पाद 'सुवर्तनी' पाठ से जात्य यणसंयोग के व्यवाय से पूर्ण होंगे ॥ १० ॥

ऋग्वेदसंहिता के दूसरे ऋषि जेतृ माधुच्छन्दस् का अनुष्टुप् में निबद्ध आठ ही ऋचाओं वाला एक ही सूक्त है। प्रथम अध्याय में इस ग्यारहवें सूक्त का १.३ पाद स्पष्टतः निचृत् है। २.३ पाद 'तुवामभि', जात्य यणसंयोग के व्यवाय से और ३.२ पाद 'दस्यन्तियूतयः', यणसन्धि के व्यवाय से, ५.१ पाद 'तुवं' पाठ से, ३ पाद 'तुवां' और ७.२ पाद 'तुवं' पाठ से जात्य यण् के



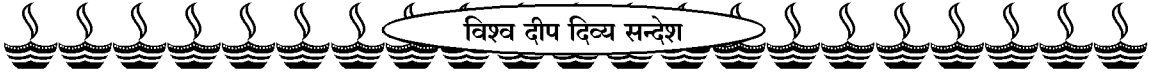
व्यवायों से, पूर्ण होंगे। ७.३ पाद 'मोजसा, अभि' पादसन्ध्य दीर्घ के छेद से पूर्ण होगा।। ११।।

इस अध्ययन के निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि -

(१) गायत्री में अष्टाक्षर तीन पाद आवश्यक हैं।

(२) मधुच्छन्दस् ने गायत्री और अनुष्टुप् छन्द में निबद्ध मन्त्रों में अष्टाक्षर पादों की ही रचना की थी। किन्तु कालप्रवाह में उच्चारण में त्वरा दोष के प्रभाव से कुछ शब्दों में स्वर+स्वर अपना स्वाभाविक पृथग् रूप नहीं रख पाए। विशेषकर मात्रिक इ-उ वर्णों को बोलने की जल्दी में, क्षिप्रता में, अर्धमात्रिक स्वस्थानिक अर्धस्वर य्-व् के रूप में सन्धिज संयोग शब्द का जात्य, स्वाभाविक, अङ्ग समझा जाने लगा। पदान्तीय और पदादिस्थ इ - उ + स्वर के उच्चारण में भी इसी क्षिप्रता के कारण क्षैप्र वर्णों, य्, व् का प्रयोग भाषिक प्रवाह में, व्यवहार में, आ गया। कालान्तर में यह स्थिति अन्य सवर्ण और असवर्ण स्वरों के युगपत् प्रयोग में दीर्घ, गुण, वृद्धि, पूर्वरूप और पररूप एकादेश सन्धिज वर्णों के रूप में व्यवहार में पूर्वापेक्षया अधिक प्रयुक्त होने लगी।

सङ्क्रमण के काल में तो ऋग्वेदसंहिता इस नए उच्चारण से, भाषिक परिवर्तन से मुक्त रही। कालान्तर में श्रुतिपर परा में नूतन उच्चारण संहिता के कलेवर में छन्द की कीमत पर भी प्रविष्ट हो गए। जात्य यणसंयोग वाले पद तो जहाँ जितनी बार प्रयुक्त हुए हैं, वहाँ उतनी बार चाहे जो छन्द रहा हो, वह उतने अक्षरों से प्रायेण भग्न हुआ है। अन्य सन्धिज क्षैप्र या एकादेश भी जहाँ कहीं, जितनी मात्रा में मन्त्रशरीर में प्रविष्ट हुए हैं, वहाँ उतनी ही बार, उतने ही अक्षरों से वेदगिरा के पादभङ्ग हुए हैं। अनुक्रमणियों में संक्रमणकाल की स्थिति का उल्लेख किया प्रतीत होता है। अनुक्रमणियों में कुछ मन्त्रों के छन्द का विवरण तो संहिता के मूल आर्ष पाठ का ही विवरण प्रस्तुत करता है। आज उपलब्ध पाठ उस पर खरा नहीं उतरता। कुछ मन्त्रों का छान्दस विवरण उपलब्ध सन्धियुक्त पाठ को पुष्ट करता है। और तो और, पाणिनि द्वारा पादपूर्त्यर्थ विहित 'सोऽचि लोपे चेत् पादपूरणम्' (अष्टाध्यायी) व्यवस्था भी



में बदलने के कारण न अष्टाक्षर रहा, न जविपुल। इसे 'बर्हिः सीदन्तुवस्रिधः ॥' करने से पाद सुलक्षण (जविपुल), पूर्ण और आर्ष हो जाएगा ॥ १३ ॥

१४वें सूक्त की १२ ऋचाओं के ३६ पादों में से ३० पाद सुव्यवस्थित लघु-गुरुक्रमयुक्त, पूर्णाक्षर, जविपुला गायत्री में हैं। दो, ८.१ और ११.१, पाद जात्य यणसंयोग के कारण खण्डित, निचृद् हो गए हैं। दो ७.२ और ११.२ पाद पादसन्ध्य पूर्वरूप के कारण निचृद्, एक १०.१ पाद जात्य और सन्ध्य यणसंयोगों के कारण विराड् गायत्र, एक १२.१ पाद यणसन्धि के कारण निचृद् हो गया है। ये सब निम्न प्रकार से व्यूह और व्यवाय कर के आर्ष रूप में आएँगे :

१. तान् यजत्राँ ऋतावृधो, अग्रे पत्नीवतस्कृधि ॥ (१४.७.१-२)।
२. ये यजत्रा य ईळियास् (८.१)।
३. विश्वेभिः सोमियं मधुवग्र इन्द्रेण वायुना। (१०.१)
- ४-५. तुवं होता मनुर्हितो, अग्ने, यज्ञेषु सीदसि। (११.१-२)
६. युक्ष्वा हियरुषी रथे (१२.१) ॥ १४ ॥

१५वें सूक्त में १.१, २.१, ३.२, ४.३ (कुल चार) पाद भुरिग् गायत्र तथा नविपुल हैं। १.२ पाद 'ऋतुना, ऽऽ तुवा (अथवा 'ऋतुना, आ त्वा') पाठ से विशन्तुविन्दवः।' ३.३ पाद 'तुवं हि रत्नधा असि' ॥ पाठ से सुलक्षण गायत्र बनते हैं। १०.१ पाद नविपुल है। ११.२ पाद निचृद् है। पर 'दीदियग्री शुचिव्रता।' पाठ से, सन्ध्य यण् के व्यवाय से यह पूर्णतः सुलक्षण हो जाता है। १२.१ पाद 'सन्तिय',^१ जात्य यण् के व्यवाय से पूर्ण और सुलक्षण होगा।

शेष पाद सुलक्षण जविपुल गायत्री में हैं ॥ १५ ॥

१ १२.१-२ पादों में ऋषि ने ही गुणसन्धि नहीं की है। यह 'ऋत्यकः' (अष्टाध्यायी) से भी विवृत्ति का विषय रहा हो सकता है।

क्रमशः.....

2149-50, सैक्टर-13, हुडा, भिवानी



ATHLETE'S BASIC PHYSIOLOGICAL PARAMETERS ENHANCED BY PRACTICING BREATHE TECHNIQUES OF YOGA IN DAILY LIFE SYSTEM

Tibor KÖKÉNY

Abstract

The physiological data of a swimmer were compared to the phases of the yogic breathe exercises he used to practice daily. According to the hypothesis the longer retention of breathe creates hypoxia that causes the consequent compensation of the body and creation of new red blood cells (RBCs) and hemoglobin (Hb). The hypothesis were supported by a development that occurred in the hematological results of the athlete especially in the values of the RBCs, Hb, and hematocrit. Such results are similar to the observations of the trainings in high altitude where natural hypoxia supports better oxygen transport by creating more RBCs and Hb. Subjective report from the athlete showed the calming effect of the breathwork on the psyche and resulted in the quicker coping.

Key words

Yoga breathe, breathe retention, hypoxia, athlete's performance, hematological result, training on high altitude

1 INTRODUCTION

1.1 Athlete's parameters

Different parameters depict the conditions of an athlete. The weight and height of the athlete does not give a precise picture of the constitution of the sportsman. The more precise data includes BMI that is to quantify the tissue mass including muscle, fat, and bone. BMI ranges are underweight: under 18.5, normal weight: 18.5 to 25, overweight: 25 to 30, obese: over 30. Body mass index is calculated as the body mass divided by the square of the body height, expressed in kg/m^2 (Banfi-DelFabbro 2006). Naturally age and gender are important information.

According to skinfold-thickness measures the body fat percentage can defined. That is an important factor among the data showing the possibility of the shift of the ratio of useful and burdening tissues of the body composition meaning the amount of fat and muscle. Together with BMI skinfoldthickness measurement supports of creating a more exact picture of the body composition.

Laboratory testing aimed to define blood cell counts. Measures included hemoglobin (Hb), hematocrit (Hct), and red blood cell count (RBC).



1.2. Physical parameters

1.2. 1 Red blood cells in the blood

Red blood cells (RBCs) are the most common in human blood corpuscles responsible for delivering oxygen (O_2) and carbon-dioxide (CO_2) between lungs and body tissues via blood flow. The RBCs constitute about 45% of whole blood by volume. Average amount in males are 130-170 g/L (Uppsala University 2008).

1.2.2 Hemoglobin in medicine and sportphysiology

Hemoglobin (Hb) is a metalloprotein mostly in the red blood cells (RBC) of humans including iron-containing part that is responsible for oxygen-transportation. Hb in the blood carries O_2 from the lungs' tissues to all other tissues and cells of the body where it releases the O_2 that is used in the metabolism of the peripheral tissues and cells. Hb carries about 20-25% of the total CO_2 from the body tissues back to lungs where the cycle closes after releasing CO_2 . Hb concentration is used to determine medically the ability of delivering O_2 by RBCs. Anemia is defined as insufficient number of RBCs and therefore the lack of O_2 in the body tissues. Anemia is present if the Hb is below the 95% confidence interval in the normal population (Elghetany et al. 2011). Medicine is interested mostly in anemic states and pathologies.

Apart from the disease called polycythemia vera (Hb greater than 18.5 g/dL in men), when the bone marrow creates too many RBCs, the elevated level of erythrocytes can be caused by burns, dehydration, heavy smoking, living at a high altitude, lung disease, excessive vomiting, and extreme exercising. Some of these states appear as the compensation of relative lack of O_2 in the tissues. The same phenomena can be provoked by certain regularly practiced breathe techniques creating hypoxia in the body tissues. Regular hypoxia can induce also the level of RBCs similar to heavy smoking, living at a high altitude, etc. (Rietjens et al. 2002)

2 METHODS

This case study was a byproduct of a fortunate coincidence namely that the blood results taken from a swimmer were not planned to fit to the breathe exercises regime he practiced daily. Although the unplanned event the athlete used to give blood samples in the laboratory for a general checking. These 3 blood results could be fitted to the breathe exercises and fitted to the diary of the athlete about the breathe regime. Post factum the athlete's biodata were evoked and attached to the results of blood and breathe diary.

The athlete was an amateur swimmer but he had daily once 2.5 hours training when he swam usually 4.5-6 km in different styles. During his trainings there were no important races that could change his training regime. There was no remarkable change in his nourishment.

3 RESULTS

3.1 Biodata

Age of the athlete at the start of the breathe exercises was 24 years and 4 months. The first



blood result were taken at the age of 24 years and 3 months that could be accepted as the starting result for breathe exercising. The second blood sample was taken at the age 24 years and 9 months after practicing 5 months of pranayama (breathe exercise). The third sample was taken at the age 25 years and 3 months after practicing 11 months of pranayama.

Height of the athlete was 183 cm, his weight at the beginning was 77.7 kg that grew to 78.3 kg at the second measurement of the blood and remained the same at the third measurement. Calculated BMI was 23.2 and 23.35 kg/m². According to skinfold-thickness measures the body fat percentage was defined 3 times together with blood results, and skinfold-thickness was 12.4% and did not change during the longitudinal study.

3.2 Laboratory testing

Blood cell counts were gained by using an automated cell counter measuring the results of hemoglobin (Hb), hematocrit (Hct), red blood cell count (RBC).

	1 st blood result	2 nd blood result	3 rd blood result
hemoglobin g/L	147	151	155
hematocrit	0.45	0.47	0.48
red blood cell count T/L	4.89	5.17	5.37

3.3 Breathe regime

Breathe exercises were adopted from Yoga in Daily Life System (YiDL) of Paramhans Swami Maheshwarananda. The System YiDL offers a complete spectrum of yogic breathe techniques starting from the beginners level built up gradually to the advanced techniques. Starting from complete yoga breathing and the basics of breathe exercises the athlete learned to utilize the differentiation of the abdominal and chest breathes utilizing the diaphragm and intercostals muscles respectively. The next step of the regime was to learn the technique of alternate nostril breathing usually called anuloma viloma. From this stage the athlete gradually reached the level of breathwork when phases of retention were included. From the basic ratio of 1:1:1:1 when the 4 stages of breathe (inhaling, retention, exhalation, retention) are equal, the ratio became 1:4:2:4 emphasizing the retention parts both with full air and without air in the lungs. The length of one breathe cycle started from 25 seconds gradually increased and lengthened till 66 seconds after 8 months of practice and it remained the same after 7 more months of practice. The length of the whole practice each day took a 60 minutes time mostly the same time of the day (before lunch 13.00 am.) but sometimes moved from this particular time (Maheshwarananda 2000).

At the time of blood tests the breathe were 25 seconds with 1:1:1:1 ratio, 55 seconds with 1:4:2:3 ratio, and 66 seconds with 1:4:2:4 ratio. It means that the end of the process became approximately 6 second per unit that was for one cycle of the breathe 11 times 6 seconds (66 seconds).



4 DISCUSSION

Although a case study cannot give a general conclusion for majority of athletes but can be used as a pilot study and can be developed as a useful practical method for future generations. In this paper the connection of breathe and physiological parameters were emphasized. It was a lucky coincidence that a swimmer starting his breathwork at the time when he had blood results measured.

Three major

factors were stressed among blood results, other data like erythrocyte sedimentation rate, white blood cells, platelet, bilirubin, etc. were the same in the three samples.

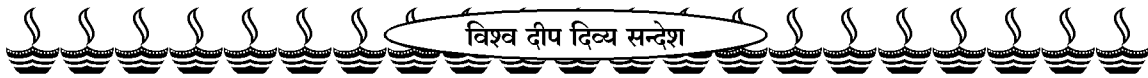
	Change from 1 st to 2 nd	Change from 2 nd to 3 rd
hemoglobin g/L	2,7%	5,4%
hematocrit	4,4%	6,7%
red blood cell count T/L	5,7%	9,8%

Results suggest that there is a remarkable difference between the first and third blood results although it cannot be named significant since there was no group results only a study of a single case. The regular breath exercises resulted an elevation of the RBCs, Hct and Hb as well. According to our hypothesis the breathwork was connected by hypoxia to the changes of blood results. Although the quantity of the breathes were not measured by spirometer but during practice mostly abdominal breathe were used by the athlete that is not the vital capacity of the lung. We can suppose an average 3-4 liters per breathe that is far lower of the amount of the average intake of air per minute of a normal person. (Normally you inhale a 0.5 liter air 16 times per minute.) This tendency of shortage of the air and oxygen intake during 60 minutes each day can create the hypoxia that facilitates the production of the RBCs and Hb to compensate the shortage of oxygen (Derby-deWeber 2010).

The historical blood doping since the late 1960s used similar methods that remained till today as a legal enhancement of the performance of athletes when training camp is on higher altitude. The smaller pressure of the air on higher altitude results the drop of oxygen in the lungs, blood, and body cells. Similar process takes place when hypoxia is generated through long retention phases of breathe that creates the same hypoxia and consequent creation of new RBCs and Hb. A subjective remark is worth to mention from the athlete in this case study. He mentioned that this type of yogic breathwork supported both his mental and physical regeneration. He reported a quicker and more effective coping with daily social stress and he reached a deeper level of peaceful state of mind.

5 CONCLUSIONS AND FURTHER POSSIBILITIES

The regular breath exercises of an athlete resulted an elevation of the red blood cells, hematocrit and hemoglobin as well. According to our hypothesis the breathwork was connected by hypoxia to the changes of hematological results. These findings are similar to the trainings on higher



altitudes (over 2500 meters) that create the same adaptation of the person to the lower pressure of air and oxygen. These results can be used for higher performances of any athletes, especially for those who face regular acidity by the type of their training.

It is also a question if the breathe exercises influence the VO2 max. and other parameters of blood that could be obtained for further researches. An extra useful information can be in similar cases the measurement of the vital capacity of the lungs and other data using spirometer. The precise results of the oxygen intake and the level of hypoxia could be a useful data that could give a possible direction for further ideas in the subject. Another future direction could be the measurement of the breathe effecting on the performance of the athlete on the field of sport including speed, endurance and other sections as ability of regeneration.

Further studies can build up a method to measure ECG and EEG results of an athlete with this type of yogic breathwork and an elevated regeneration time and coping capacity can be counted.

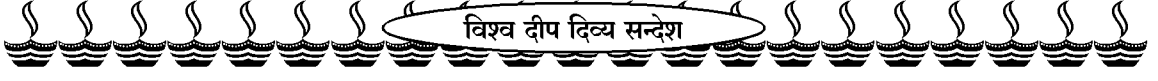
The ability of enduring hypoxia can bring better results during the higher phases of the tiredness of an athlete.

6 REFERENCES

- Derby, R.; deWeber, K. (2010): The Athlete and High Altitude. *Current Sports Medicine Reports*: 9(2): 79-85
- Elghetany MT, Banki K. Erythrocytic Disorders. McPherson RA, Pincus MR, eds. (2011): *Henry's Clinical Diagnosis and Management by Laboratory Methods*. 22nd ed. Philadelphia, PA: Saunders, an imprint of Elsevier Inc; Chap 32:557-600.
- Maheshwarananda, P.S. (2000): *Yoga in Daily Life – The System*, Iberia/European University Press, Austria
- Rietjens GJ, Kuipers H, Hartgens F, Keizer HA (2002): Red blood cell profile of elite Olympic distance triathletes. A three-year follow-up. *Int J Sports Med*. 23(6):391-396]
- Uppsala University Hospital's reference range list ("Laborationslista"). (2008) Artnr 40284 Sj74a. Issued on April 22, 2008
- Vajpayee N, Graham SS, Bem S. Basic Examination of Blood and Bone Marrow. McPherson RA, Pincus MR, eds. (2011): *Henry's Clinical Diagnosis and Management by Laboratory Methods*. 22nd ed. Philadelphia, PA: Saunders, an imprint of Elsevier Inc; Chap 30:509-35.

CONTACT

Tibor Kökény, MA Psychology
University of Debrecen
Debrecen, Hungary
E-mail: kokenyt@gmail.com



भारतराष्ट्रपरिचयः

डॉ. सुरेन्द्र शर्मा

स्वायम्भुवस्य मनोज्येष्ठपुत्रस्य प्रियव्रतस्य दशपुत्रा आसन्। तेषु सप्तैव उत्तराधिकारिरूपेण सप्तद्वीपानां नृपतयो बभूवुः। त्रयः पुत्रा योगपरायणा उत्तराधिकारं नैव गृहीतवन्तः। द्वीपाधिकारिणां सप्त पुत्राणां नामान्यधिकृतद्वीपानुसारं निम्नप्रकारेण उल्लेखनीयानि सन्ति—

(1) आग्नीध्रः— जम्बूद्वीपनृपः (2) मेधातिथिः— प्लक्षद्वीपनृपः (3) त्वपुष्मान्शात्मलीद्वीपनृपः (4) ज्योतिष्मान्— कुशद्वीपनृपः (5) द्युतिमान्— क्रोञ्चद्वीपनृपः (6) भव्यः— शाकद्वीपनृपः (7) सवनः— पुष्करद्वीपनृपश्च।

शेषाणां त्रयाणां पुत्राणां नामानि मेधा अग्निबाहुः पुत्रश्चासन्।

जम्बूद्वीपस्य विभाजनम्—

आग्नीध्रस्य नव पुत्रा आसन्। तेषां नामानि सन्ति— (1) नाभिः (2) किम्पुःषः (3) हरिवर्षः (4) इलावृतः (5) रम्यः (6) हिरण्वान् (7) कुरुः (8) भद्राश्वः (9) केतुमालश्च।

आग्नीध्रः जम्बूद्वीपस्य नवधा विभाजनं कृत्वा प्रत्येकमेकैकस्याधिकारिणं कृतवान्। विभाजितानां नवखण्डानां नामान्यधिकारिक्रमेण निम्नानुसारं निर्दिष्टानि सन्ति—

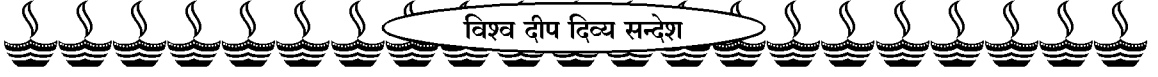
(1) नाभिः — हिमवर्षः (2) किम्पुरुषः— हेमकूटः (3) हरिवर्षः— नैषधवर्षः (4) इलावृतः— इलावृतवर्षः (5) रम्यः— नीलाचलवर्षः (6) हिरण्वान्— श्वेतवर्ष (7) कुरुः— उत्तरकुरुवर्षः (8) भद्राश्वः— भद्राश्ववर्षः (9) केतुमालः — गन्धमादनवर्षः

नाभिवंशः

नाभेरेक एव पुत्र आसीत्। तस्य नाम ऋषभ इत्यासीत्। ऋषभस्य शतं पुत्रा आसन्। तेषु भरतः ज्येष्ठ आसीत्। नाभे हिमवर्षम् ऋषभ प्राप्तवान्। षणात् हिमवर्षः भरतेन सम्प्राप्तः। अस्य ऋषभपुत्रस्य भरतस्य नाम्नैव हिमवर्षः भरतेन सम्प्राप्तः। अस्य ऋषभपुत्रस्य भरतस्य नाम्नैव हिमवर्षः कालान्तरे भारतवर्ष इति नाम्ना प्रसिद्धौ बभूव इति पुराणैर्विज्ञायते।

अस्यापि भारतवर्षस्य पुनर्नवधा विभाजनं सञ्जातम्। अतएव भारतभूभागे नवद्वीपानां स्थितेरुल्लेखाः उपलभ्यन्ते— (1) इन्द्रद्वीपः (2) कसेरुद्वीपः (3) ताम्रपर्णद्वीपः (4) गभस्तिमान् द्वीपः (5) नागद्वीपः (6) सौम्यद्वीपः (7) गन्धर्वद्वीपः (8) वारुणद्वीपः (9) कुमारीद्वीपश्च। वर्तमाने कुमारीद्वीपपर्यन्तिको भाग एव भारतवर्ष इति नाम्ना विज्ञायते। सुदीर्घकालात् इदमेव नाम अस्य कृते सुप्रचलितमस्ति।

भरतस्य नाम्ना अयं देशो भारत इत्युच्यते स्म इति सन्दर्भे 'भरत' शब्दस्यार्थो विचारणीयोऽस्ति।



अस्मिन् विषये वैदिकनिघण्टुकारो भगवान् यास्कः यज्ञसम्पादकानां ऋत्विजाम् अष्टौ नामान्युल्लिखति प्रथमं नाम 'भरताः' इत्यस्य स्थाने क्वचिद् 'भारताः' क्वचि सहेव उल्लेखोऽपि प्राप्यते। भरतः क इति सन्दर्भे शतपथ ब्राह्मणे वचनमस्ति—

(1) “प्रजापतिवै भरतः स हीदं सर्वं बिभर्त्ति” (शत.ब्रा. 5/8/1/14)

(2) “प्रजापतिवै मनुः स इदं सर्वम् अमनुत।” (शत.ब्रा. 9/6/1/19)

शतपथमतेन मनुरेव भरतसंज्ञक आसीत्। प्रजापतित्वात् प्रजाया भरणपोषणकर्तृत्वात् तदीयं भरतत्वं विज्ञापितं भवति।

कौषीतकिब्राह्मणे तूक्तम्—

“अग्निर्वै भरतः स वै देवेभ्यो इव्यं भरति” (कौषी.ब्रा. 3/2)

शतपथब्राह्मणस्यैवाधोलिखितेन वचनेनास्य पुष्टिर्भवति—

“अषहि देवेभ्यो हव्यं भरतितस्माद् भरतोऽग्निरित्याहुः।” (शत.ब्रा. 1/4/2/2)

अग्निर्हि देवानां यज्ञहव्येन भरणपोषणं करोति अतएवाग्नेरपि भरतसंज्ञा। भरतस्योक्त वैशिष्ट्यं मनसि कृत्वैव भगवान् ऋषभः स्वपुत्रस्य नाम भरत इति चक्रे। यद्यपि यज्ञोपासकत्वात् ततःपूर्वमपि अस्मद्देशीयाः प्रजा भारती इत्युच्यते स्म।

महाकविः कालिदासवोऽपि दुष्यन्तपुत्रस्य भरतस्य नामकरणसन्दर्भे अमुं रहस्यं गूढं प्रवक्ति—

इहायं सत्त्वानां प्रसभदमनात् सर्वदमनः।

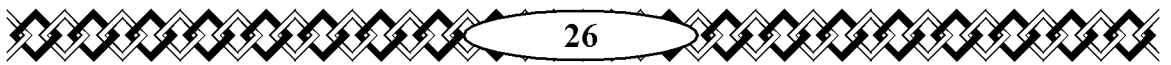
पुनर्यास्यत्याख्यां भरत इति लोकस्य भरणात्॥ (अभि.शाकु. 7/33)

अयमपि भरतो मनुतुल्यतां प्राप्तवान् किन्तु भारत इति नामकरणे ऋषभपुत्रो भरत एव हेतुर्न तु दुष्यन्तपुत्रो भरतः। तथापि दुष्यन्तपुत्रस्य भरतस्य महत्त्वं अस्यां परम्परायां वैदिकयज्ञियसंस्कृतेः परिपोषकत्वात् स्वीक्रियते। एतरेय ब्राह्मणस्योल्लेखानुसारम् अयं भरतः त्रयस्त्रिंशदुत्तरशतमितानि यज्ञानि अश्वमेघसंज्ञकानि सम्पादितवान्। अस्य चक्रवर्तित्वचे यज्ञियदेशानां पर्याप्तं विस्तारः समभवत्।

यज्ञियसंस्कृतेः प्रसाराद् भारते म्लेच्छत्वस्य सर्वथाऽपहारः संजातः। अतएव मानवीय आचारव्यवहारयोर्विशुद्धतायाः संस्थापनाद् भारतस्य महत्त्वं विश्वस्मिन् विश्वे अवर्धत। भगवतो मनोः काले एव म्लेच्छस्वापहारस्य प्रक्रिया प्रारभत। अतएव मनुस्मृतौ ब्रह्मावर्तः, ब्रह्मर्षिदेशः, आर्यावर्तः, यज्ञियदेशश्चास्य संज्ञा उपलभ्यन्ते। अस्मादिरिक्तावशिष्टभूभागस्य कृते म्लेच्छसंज्ञा व्यवहारः प्राप्यते।

भाषिक व्यवहारेऽपशब्दानां प्रयोगात्तेषां म्लेच्छत्वम्। भारते तु भगवता पाणिनिना बहुपूर्वं देववाण्या माध्यमेन भाषायां विशुद्धव्यवहाराय शब्दोपदेशः कृत आसीत्। अस्य शब्दानुशासनस्य परम्परया म्लेच्छत्वमत्र तत एव निराकृतमासीत्। भारतस्य विश्वगुरुत्वेऽपि इदमेव प्रमुखकारणमासीद् यत् अत्रत्य संस्कृतभाषायामपशब्दविवेको नास्ति शब्दानामेवानुशासनमत्रोद्दिष्टम्।

पूर्व प्राचार्य, श्री दादू आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, जयपुर





वीराङ्गना महारानी कैकेयी

वैद्य गोपीनाथ पारीक 'गोपेश'

कैकेयी केकय देश के अधिपति अश्वपति की प्यारी पुत्री और अयोध्या के सम्राट दशरथ की प्रिय महारानी थी। नृपति अश्वपति ने अपने पुत्र युधाजित् की भाँति अपनी पुत्री कैकेयी को भी शस्त्र एवं शास्त्र में पूर्ण पारङ्गत बनाया था। अश्वपति और महाराज दशरथ घनिष्ठ मित्र थे। जब अपने पिता के समक्ष युधाजित् ने उनके राज्यारोहण की स्वर्ण जयन्ती मनाने का प्रस्ताव रखा तो पिता ने यह प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लिया। इस समारोह को एक भव्य रूप देने में पिता-पुत्र ने कोई कसर नहीं छोड़ी थी। दूर-दूर देशों के जिन राजा-महाराजों को इस कार्यक्रम में आमन्त्रित किया गया था उनमें अयोध्या के नरेश महाराज दशरथ भी एक थे। इस समारोह के विविध कार्यक्रमों में एक अश्वारोहण और एक रथसंचालन की प्रतियोगिता भी रखी गयी थी। इन दोनों प्रतियोगिताओं में बहुत से कुशल पुरुषों ने भाग लिया था इनमें महिला केवल एकमात्र कैकेयी ही थी। कैकेयी से युधाजित् तीन वर्ष बड़े थे। उस अश्वारोहण की प्रतियोगिता में युधाजित् ने प्रथम स्थान प्राप्त किया था और रथसंचालन प्रतियोगिता में कैकेयी ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। प्रतियोगिता के विजेताओं को पुरस्कार प्रदान करने का दायित्व अश्वजित् ने महाराज दशरथ को ही सौंपा था। जब कैकेयी अपना पुरस्कार प्राप्त करने हेतु महाराज दशरथ के समक्ष उपस्थित हुई तो महाराज अयोध्यानरेश ने कहा था— 'आज मैं अपने जीवन में प्रथम बार किसी ऐसी नारी को देश रहा हूँ जिसमें पुरुषों के समकक्षा खड़े होने का नहीं, उनको ललकारने का भी साहस है। वह नृपति बड़ा सौभाग्यशाली होगा, जिसके राजप्रासाद की राजकुमारी कैकेयी शोभा बढ़ायेगी।'

दशरथ के मुख से कैकेयी की प्रशंसा सुनकर अश्वपति अत्यन्त प्रसन्न हुये और ऐसी पुत्री को पाकर गौरवान्वित हुये। किन्तु सहसा उन्हें वह राजज्योतिषी का कथन स्मरण हो आया जिसमें उसने कैकेयी के जन्म के अवसर पर कहा था— 'यद्यपि आपकी लाड़ली बेटी को चक्रवर्ती सम्राट की महारानी बनने का सौभाग्य प्राप्त होगा किन्तु आपकी आँखों की पुतली को तिरस्कृत होकर जीना पड़ेगा।' यह ध्यान में आते ही कैकय नरेश के मुख पर सहसा उदासी छा गई।

केकय देश का वह राजा आस्तिक विचारों का था। धर्म, ज्योतिष आदि में वह पूर्ण विश्वास करता था। श्री वासुदेश अग्रवाल के अनुसार केकय जनपद झेलम, शाहपुरा और गुजरात प्रदेश का पुराना नाम था, जिसमें इस समय खिउड़ा की नमक की पहाड़ी है। केकय जनपद राजाधीन था। वहाँ के निवासी (क्षत्रिय गोत्रापत्य) कैकय कहलाते थे। भर्गादिगण में भी केकय का पाठ है। (पाणिनीकालीन भारतवर्ष)।

जब युधाजित् और कैकेयी को अपने पिता के द्वारा यह ज्ञान हुआ कि महाराज दशरथ शब्दबेध



विद्या में पूर्ण कुशल हैं तो वे उनका यह चमत्कार देखने को आतुर हो उठे। पिता, पुत्र और पुत्री ने जब यह चमत्कार दिखाने का आग्रह किया तो पहले तो महाराज दशरथ ने मना कर दिया। श्रवणकुमार की घटना के बाद उन्होंने इस कला के प्रदर्शन से सर्वथा मुख मोड़ लिया था। किन्तु दोनों भाई-बहिनों के अत्यधिक आग्रह पर उन्होंने स्वीकृति प्रदान कर दी।

दूसरे दिन ही जंगल में जाकर यह कला दिखाने हेतु शासन द्वारा प्रबन्ध किया गया। महाराज दशरथ, युधाजित और कैकेयी ने पृथक्-पृथक् अश्वों पर आरूढ होकर वन में प्रस्थान किया। साथ में अंगरक्षक के रूप में तीन योद्धा आगे और तीन योद्धा उनके पीछे रवाना हुये। कुछ दूर वन में जाने के पश्चात् वनराज सिंह की दहाड़ सुनाई दी। उस गर्जना को सुनते ही महाराज दशरथ ने अपना बाण चलाया और वह बाण गर्जना की दिशा में जाकर सिंह के शरीर में जा लगा और वह वहीं मूर्च्छित होकर जमीन पर गिर गया। इसके तुरन्त बाद सिंह के धराशायी होने पर सिंहिनी क्रुद्ध होकर दौड़ी आई और युधाजित पर झपटने को उद्यत हुई। यह देखकर पलक झपकते ही कैकेयी ने बाण सिंहिनी पर चला दिया और वह मृत्यु के मुख में चली गई। इस घटना से महाराज दशरथ की शब्दबेध कला की अपेक्षा राजकुमारी कैकेयी की बहादुरी की घर-घर में अधिक चर्चा होने लगी। महाराज दशरथ भी राजकुमारी की इस विरोचित कुशलता से अत्यधिक प्रभावित हुये थे।

अब तो अवध नरेश राजकुमारी कैकेयी को अपनी प्रिय अर्द्धाङ्गिनी बनाने को लालायित हो उठे और उन्होंने यह प्रस्ताव अश्वपति के समक्ष रख ही दिया। इस प्रस्ताव को सुनकर नृपति अश्वपति दुविधा में पड़ गये कि क्या किया जाय?

एक तो उस समय महाराज दशरथ की आयु कैकेयी से दुगनी थी। महाराज यदि 40-44 वर्ष के थे तो राजकुमारी 20-22 वर्ष की ही थी। और फिर महाराज के दो रानियाँ पहले से ही थी। अश्वपति को यह भी ज्ञात था कि महाराज अपनी बड़ी रानी कौशल्या से अधिक स्नेह करते थे। ऐसी स्थिति में वे असमंजस में थे। फिर भी उन्होंने इस सम्बन्ध में अपनी पत्नी, अपने पुत्र और स्वयं पुत्री से परामर्श लेना उचित समझा। उन्होंने समय पाकर तीनों से परामर्श लिया। इसमें युधाजित ने तो इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया था किन्तु महारानी और कैकेयी ने इसे अस्वीकृत नहीं किया था। राजा अश्वपति महाराज दशरथ के प्रस्ताव को अस्वीकृत कर उन्हें नाराज नहीं करना चाहते थे। वे जानते थे कि महाराज को नाराज करने से राज्य पर कोई संकट उत्पन्न हो सकता है। आखिर में युधाजित भी इस शर्त पर राजी हुआ कि उनसे यह वचन ले लिया जाय कि कैकेयी से उत्पन्न पुत्र ही आपका उत्तराधिकारी होगा।

कैकेयी के भाई के कथन को विवश होकर ही सही, अयोध्यानरेश ने स्वीकारते हुये वचन दे ही दिया और दोनों के पाणिग्रहण की तैयारियाँ होने लगी। दोनों परिणय सूत्र में बंध गये। जब महाराज दशरथ की रानी बन कर कैकेयी अयोध्या के लिये प्रस्थान करने लगी तब उसकी माता ने कहा कि—



‘बेटी! तुम अयोध्या के राजप्रासादों में सजग होकर रहना। मैं तुम्हारे साथ अपने प्रतिहारी की पुत्री मंथरा को भेज रही हूँ। यह तुम्हारी हर प्रकार से सहायता करेगी। वहाँ होने वाली प्रत्येक गतिविधि से तुम्हें यह अवगत कराती रहेगी और सजग बनाती रहेगी। तुम इसे पूरी तरह से सम्मान देना, यह तुम्हारा कभी अहित नहीं होने लगी। कई बार ऐसे अवसर आते हैं जब केवल शस्त्र-शास्त्र काम नहीं आते, वहाँ पर चतुराई से काम लेना होता है। यह चतुर दासी ऐसे समय तुम्हारी सहायता करेगी।

दस दिनों के प्रवास के पश्चात् महाराज दशरथ अपनी नव परिणता रानी के साथ अपने प्रासाद में प्रविष्ट हुये। चारों तरफ हर्ष छा गया। नई रानी का सभी ने हर्ष भरे उत्साह के साथ स्वागत किया। तीनों रानियों के प्रति महाराज का स्नेहपूर्ण व्यवहार था। बड़े आमोद-प्रमोद के साथ राजा दशरथ का दाम्पत्य जीवन बीत रहा था। यद्यपि वे नई महारानी कैकेयी पर अधिक आसक्त थे किन्तु दोनों अन्य महारानियों से भी पूर्ववत् स्नेह रखते थे। कैकेयी का महाराज को अपने राज-काज में भी सहयोग मिलता रहता था। प्रजा इन नृपति के आधिपत्य में बहुत प्रसन्न थी।

कुछ दिनों के पश्चात् ही अमरावती से देवराज इन्द्र का अपनी सहायता करने हेतु महाराज के पास सन्देश आया। एक असुर जिसका नाम शम्बर था, वह बड़ा मायावी एवं प्रबल योद्धा था। वह दण्डकारण्य के वैजयन्त नामक नगर में रहता था। उसने अपने पराक्रम से देवताओं को भयभीत कर रखा था। उस असुर को परास्त करना इन्द्र के वश की बात नहीं थी। उसे विश्वास था कि यदि महाराज दशरथ सहायता करें तो वह असुर मारा जा सकता है। अतः देवराज ने सहायतार्थ महाराज से निवेदन किया था।

जब महाराज इस युद्ध हेतु प्रस्थान करने को उद्यत हुये तो महारानी कैकेयी ने भी उनके साथ युद्ध में भाग लेने की इच्छा प्रकट की। महाराज भी यही चाहते थे, उन्होंने सहर्ष महारानी को स्वीकृति दे दी। कुशल सारथी को लेकर दोनों दम्पती रथ में आरूढ होकर युद्धस्थल पर पहुँच गये। देवराज इन्द्र महाराज और महारानी को अपने समक्ष पाकर बड़े प्रसन्न हुये और वे अपनी विजय के लिये पूर्ण आश्वस्त हो गये।

सारथी ने रथ को दौड़ा कर समरभूमि में लाकर खड़ा कर दिया जिस रथ में आयोध्यानरेश अपनी धर्मपत्नी वीराङ्गना कैकेयी के साथ आरूढ थे। यह देखकर देवराज इन्द्र की प्रसन्नता का कोई ठिकाना नहीं रहा। उन्होंने गद्गद् होकर महाराज और महारानी का हृदय से अभिवादन किया। आज उन्हें असुरों के विनाश में कोई सन्देह नहीं रहा। असुर शम्बर भी नवीन योद्धा को देखकर भयभीत हो गया।

घोर संग्राम प्रारम्भ हुआ। अधिक देर तक जबरदस्त मुठभेड़ होने के कारण महाराज थक गये। उन्हें तन्द्रा की झपकी सी आने लगी। अवसर पाकर असुरों ने उनके सारथि को मार गिराया। कैकेयी ने तत्काल मोर्चा संभाला। घोड़ों को भागने से रोकने के लिये उसने अश्वों की लगाम को मुख में लेकर



धनुष चढाया। इस प्रकार बाण वर्षा कर पति की रक्षा करने में सफल हुई। सारथि भी दूसरा आया और महाराज सावधान होकर पुनः युद्ध करने लगे। सहसा कैकेयी की दृष्टि रथ के उस धुरे पर पड़ी जो शत्रु के बाण से टूट कर दूर जा गिरा था। वह तत्काल रथ से नीचे कूद पड़ी और रथ के धुरे के स्थान पर अपनी पूरी भुजा लगा दी। महाराज तो युद्ध में सन्मय थे। यदि वह रथचक्र को रोकने के लिये ऐसा प्रयास नहीं करती तो महाराज भूमि पर गिर पड़ते।

कुछ ही देर में कुशल योद्धा महाराज के बाण से असुर शम्बर मारा गया और शेष सेना पराजित होकर भाग गई। अपनी प्रेयसी का रक्तंजित हाथ देखकर अवधपति महाराज दशरथ को अपनी वीराङ्गना के लिये कहना पड़ा— 'प्रिये! तुमने सारथि के स्थान पर अश्वों की लगाम थामकर और रथचक्र में अपनी भुजा लगाकर मेरे प्राणों की दो बार रक्षा की है, अतः तुमको जो अभीष्ट हो, वे दो वरदान माँग लो।

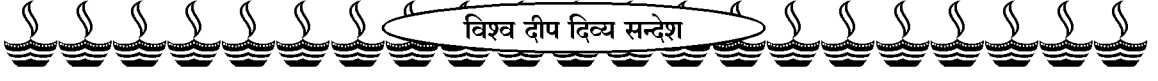
'प्राणनाथ! आपकी सुरक्षा से बढ़कर मेरा क्या अभीष्ट हो सकता है? मैं आपकी इस प्रकार सेवा कर सकी—यह मेरे लिये श्रेष्ठ वरदान है।' पतिपरायणा कैकेयी का यह उत्तर सुनकर महाराज के मुख पर असुर विनाश से बढ़कर प्रसन्नता छा गई। महाराज के अधिकाधिक आग्रह को देखते हुये महारानी ने यह कहकर बात टाल दी कि 'मुझे जब आवश्यकता होगी, तब ये दो वरदान माँग लूँगी।'

देववैद्यों ने महारानी की आहत भुजा का उपचार किया। देव समुदाय ने साकेत नृपति दम्पती का जयघोष किया और देव राज ने कहा— 'ऐसी होती है भारत की वीराङ्गना।'

अध्यक्ष, राजस्थान आयुर्वेद विज्ञान परिषद,
21, रामेश्वर धाम, मुरलीपुरा स्कीम, जयपुर

शोध संस्थान में प्रकाशित पुस्तकें

1. प्रस्थानभेदः	मधुसूदन सरस्वती
2. सर्वविध पतन महान न कन्या की याचना न कन्या का दान	पं. अनन्त शर्मा (भारतीय विद्या मनीषी)
3. ऋग्वेद यजुर्वेद के पुरुष सूक्त पर एक चिन्तन	पं. अनन्त शर्मा
4. परिभाषेन्दुप्रिया (व्याकरण)	आचार्य पं. लक्ष्मीनारायण शर्मा
5. कौटिल्य अर्थशास्त्र भू वन्दना की सनातन आर्षदृष्टि	पं. अनन्त शर्मा
6. काश्मीरगौरवम्	डॉ. रामदेव साहू
7. विश्व गुरुदीपः मनुस्मृति	पं. अनन्त शर्मा
8. हिन्दुधर्म परम्परा (एक वैज्ञानिक विवेचन)	श्रीमती अंजना शर्मा



विश्वविज्ञान वेदशास्त्र

विनोद कुमार शर्मा

वेद विश्व विज्ञान है। विश्व अग्नि-सोमात्मक है। विश्व के आरम्भक अग्निसोमस्वरूप ब्रह्मविषयक दिव्यविज्ञान का उपायशास्त्र ब्रह्म है और यह विज्ञान का उपाय ब्रह्म परोक्ष तत्त्वों के द्रष्टा महर्षियों में स्वयं प्रादुर्भूत हुआ। वह वेद है। अभियुक्तो (आप्त पुरुषों) ने कहा है—

युक्तैः— युगान्तेऽन्तर्हितान् देवान् सेतिहासान् महर्षयः।
लेभिरे तपस्या पूर्वमनुज्ञाताः स्वयंभुवा॥

क्षीणायुषः क्षीणसत्वान् दुर्येधान् वीक्ष्य कालतः। (मनुः)
वेदान् महर्षयो व्यस्यन् हृदि स्याऽच्युतनोदिताः॥ (भागवते)

अनागतमतीतं च वर्तमानतीमीन्द्रियम्।
विप्रकृष्टं व्यवहितं सम्यक् पश्यन्ति योगिनः॥ (भागवते)

आविर्भूतप्रकाशानामनुपप्लुतचेतसाम्।
अतीतानागतज्ञानं प्रत्यक्षात्र विशिष्यते॥

अतीन्द्रियानसंवेद्यान् पश्यन्त्यार्षेण चक्षुषा।

ये भावान् वचनं तेषां नानुमानेन बाध्यते॥ (भर्तृहरिः)

पहले स्वयंभू के द्वारा अनुज्ञाप्राप्त महर्षियों ने कालक्रम से अन्तर्हित इतिहास सहित वेदों को क्षीणायु, क्षीणबल और दुबोध जानकर तपोबल के द्वारा युगान्त में प्राप्त किया। (मनु)। हृदय में स्थित अच्युत (भगवान् विष्णु) के द्वारा प्रेरित महर्षियों ने वेदार्थ का निर्णय किया। (भागवत) योगिजन भूत, भविष्य, वर्तमान, अतीन्द्रिय, दूरस्थ, व्यवधानयुक्त वस्तु का सम्यक् ज्ञान करते हैं। (भागवत)

जिनके चित्त रजोगुण और तमोगुण से अभिभूत नहीं है, जिन्हें (तप के कारण क्षीण कल्मष होने से) आवरण रहित (विपर्ययरहित) ज्ञान हो गया है उन महर्षियों को जो भूत और भविष्यत् का ज्ञान होता है, वह अस्मदादि प्रत्यक्ष से विलक्षण नहीं होता। (अर्थात् लौकिक प्रत्यक्ष की तरह प्रत्यक्ष होता है।)

(वाक्यपदीय, ब्रह्मकाण्ड, कारिका 35-38)

पुस्तकालय प्रभारी,

पद्म श्री नारायणदास रामानन्ददर्शन अध्ययन एवं शोध संस्थान, जयपुर



देव गुरु बृहस्पति देवी-देवताओं के भी गुरु हैं

जितेन्द्र हाडा

ज्योतिष शास्त्र अनुसार नवग्रहों में बृहस्पति को गुरु की उपाधि दी गई है। क्योंकि मनुष्य के जीवन पर इस ग्रह का महत्वपूर्ण स्थान तथा प्रभाव है। यह गुरु ग्रह सभी प्रकार की आपदाओं-विपदाओं, विनाशक स्थितियों से पृथ्वी के साथ-साथ मनुष्यों की रक्षा करने वाला ग्रह है।

सौरमण्डल में सूर्य के वृहद् आकार के बाद बृहस्पति ग्रह के आकार को माना गया है। पृथ्वी से दूर इस ग्रह का व्यास, करीब 150000 किलोमीटर तथा सूर्य से इसकी दूरी 777,000000 किलोमीटर तक होना उल्लेखित है। यह गुरु ग्रह के रूप में बृहस्पति महर्षि अंगीरा के पुत्र है, माता का नाम सुमित्रा, बहन का नाम योग सिद्धा है। ये जीव के कारक ग्रह है। ये सत्य के प्रतीक है, बुद्धि, ज्ञान, वाणी शक्ति के स्वामी है। साथ ही इन्हें देवी-देवताओं का गुरु होने का पद व सम्मान प्राप्त है। बृहस्पति के अलग इनके अन्य नाम हैं- देव-पुरोहित, देवमन्त्री, देवग्य, गुरु, अंगीरा जीव, वाचस्पति। इनके देवता ब्रह्मा है। गौत्र- अंगीरा, वाहन- एरावत (सफेद रंग का हाथी) स्वभाव मौन, शांत, क्षत्रिय पुरुष। भ्रमण काल एक राशि में 13 माह, विशेषता में इन्हें रहस्यमयी ज्ञानी कहा जाता है।

नक्षत्र- पूर्वाभाद्रपद, पुनर्वसु, विशाखा, दिशा ईशान कोण, गुरु गृह बृहस्पति सूर्य की तरह अस्त तथा उदय होते हैं। इनके बीच 30 दिनों का अन्तर रहता है। इनका आकार इतना है कि 1300 पृथ्वीयां इसमें समा सकती हैं। इनकी शक्ति पृथ्वी से 318 गुणा अधिक है।

ये गुरु गृह मनुष्य पर तभी प्रसन्न होते हैं जब वह गुरु बनाये, उनकी सेवा-अर्चना करे। दादा-दादी, माता-पिता का आदर करे, पीपल के वृक्ष में जल चढ़ाये, सत्य बोले, घर को धूप-दीप से सुवासित रखें। अधर्म, दुराचरण से कोसों दूर रहें।

कुण्डली में गुरु द्वितीय, पंचम, नवम, दशम एवं एकादश भाव के कारक ग्रह हैं। धनु एवं मीन राशि पर इनका आधिपत्य है। धनु राशि बृहस्पति की मूल त्रिकोण राशि है। इसके मित्र सूर्य, मंगल एवं चन्द्रमा हैं। पीला पुखराज एवं सुनहला इनका रत्न है। गुरु ग्रह कर्क राशि में उच्च के होते हैं तथा मकर राशि में नीच के हो जाते हैं।

जयपुर





माननीय मुख्यमंत्री श्री अशोक गहलोत से सद्भावना भेंट करते स्वामी ज्ञानेश्वर पुरी



आस्था सांस्कृतिक संस्था की ओर से पं. मधुसूदन ओझा सम्मान प्राप्त करते स्वामी ज्ञानेश्वर पुरी

विश्व गुरुदीप आश्रम एवं शोध संस्थान, जयपुर में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय वैदिक संस्कृति व्याख्यानमाला की कुछ झलकियाँ



नई पीढ़ी को दें वैदिक संस्कृति की जानकारी

जयपुर। विश्वगुरुदीप आश्रम व शोध संस्थान के तत्परकमन में अंतर्राष्ट्रीय वैदिक संस्कृति व्याख्यान माला का आयोजन श्याम नगर स्थित विश्व गुरुदीप आश्रम में किया गया। इस मौके पर कक्षाओं में वैदिक संस्कृति के प्रसार-प्रचार पर जोर दिया। व्याख्यानकर्ता के संयोजक डॉ. सुरेंद्र कुमार ज्ञानी ने कहा कि व्याख्यानमाला का शुभारंभ जगतगुरु रामानंददास संस्कृत विश्वविद्यालय के पूर्व चीफ़ क्लर्क पी.टी. अरवि ज्ञानी ने किया। इस मौके पर आश्रम के सहायक महासंयोजक ज्ञानेश्वरपुरी महाराज ने कहा कि वैदिक संस्कृति के प्रचार-प्रसार के लिए हम यहाँ की शिक्षा जैसे आयोजनों के विचार करने की जरूरत है जहाँ हमारी अनेक कक्षाओं को वैदिक संस्कृति के बारे में ज्ञान देने के लिए हमारी पीढ़ी वैदिक संस्कृति से अनभिज्ञ है।

इस दौरान वैदिक संस्कृति की जानकारी के लिए अध्यापक शिक्षकों को गहरी जरूरत है। उन्होंने कहा कि अगर नई पीढ़ी को वैदिक संस्कृति की जानकारी देने के लिए हमें एक ही रास्ता है।

वे इसके लिए हम यहाँ वैदिक संस्कृति के प्रचार-प्रचार करिए एक जुट होकर कार्य करने की जरूरत है। व्याख्यानमाला का प्रस्ताव अनेक देशों में भी किया जा रहा है। विद्यार्थी सहित अन्य विद्यार्थी प्रेषित रहे।

प्रकाशक : विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान, कीर्ति नगर, श्याम नगर, सोढाला, जयपुर
Mail Id. : vishwagurudeepashram@gmail.com • Website : <https://www.vgda.in>